हिन्दी ईमेगेज़िन • वर्ष १ • अंक ३१

शनिवार

एडिटर : धीमंत पुरोहित • संपादक : राजेश बादल

सुर सम्राट - कुंदन लाल सहगल

हिन्दी ईमेगेज़िन • वर्ष १ • अंक ३१

शनिवार

" सुर सम्राट - कुंदन लाल सहगल "

एडिटर : धीमंत पुरोहित
संपादक : राजेश बादल

प्रकाशक : www.newzviewz.com की ओर से
धीमंत पुरोहित

आपकी रचनाएं भेजने के लिए ईमेल
dhimantaajtak@gmail.com

समीक्षा के लिए पुस्तक भेजने का पता
कम्यूनिकेटर्स, 509, शिवालिक हाईस्ट्रीट,
मानसी सर्कल के पास, वस्त्रापुर,
अमदाबाद - 380015
मोबाइल - +91 98798 10101

मेगेजिन डिझाइन : हर्षल गिल्डर

सुर सम्राट - कुंदन लाल सहगल

राजेश बादल

कुंदन कश्मीर वाला

सौ सवा सौ साल पहले के हिंदुस्तान में किसी तहसीलदार के घर जन्म लेने का मतलब किसी छोटे मोटे राजा के घर जन्म लेना ही था । जालंधर से जम्मू आकर बसा सहगल परिवार कश्मीर रियासत का भरोसेमंद परिवार था । कुंदन को देखते ही जाने माने सूफ़ी पीर सलमान यूसुफ़ ने एलान कर दिया कि बच्चा एक दिन बड़ा गायक बनेगा । कुंदन की माँ केसर ख़ुद भी अच्छा गातीं थीं । वो इस भविष्यवाणी से खुश थीं लेकिन तहसीलदार पिता के लिए यह अच्छी सूचना नहीं थी । फिर भी माँ - बेटे के गीत-संगीत में उन्होंने अड़चन नहीं डाली ।पिताजी को ये भांडगीरी लगती थी ।लेकिन वो मन मसोस कर रह जाते क्योंकि पत्नी का प्रिय शौक था । हद तो ये थी कि स्कूल में मास्टरजी गणित समझाते लेकिन कुंदन के ज़ेहन में चरवाहों की बाँसुरी और उनके लोकगीत चलते रहते । लोकगीत सुनने के लिए वो अक्सर स्कूल से ग़ायब हो

जाता ।रात को पोल खुलती तो पिताजी के गुस्से का सामना करना पड़ता । एक बार तो पिता ने नौकर की डयूटी लगा दी । हिदायत दी कि कुंदन पर कड़ी नज़र रखे और स्कूल से भागने न दे । लेकिन कुंदन नौकर को चकमा देकर रफ़ूचक्कर हो जाते और स्कूल की छुट्टी से पहले प्रकट हो जाते । उमर केवल बारह बरस की थी लेकिन पूरे जम्मू में गायकी के चर्चे हो गए ।एक दिन तो कमाल हो गया ।पिताजी के साथ कुंदन महाराजा के दरबार गया | वहां मीरा का भजन गाया । भजन पूरा होते ही तालियों की गड़गड़ाहट से दरबार हॉल गूँज उठा । महाराजा ने कहा,इस लड़के के गले में सरस्वती हैं । बड़ा नाम कमाएगा । एक दिन जम्मू की मशहूर रामलीला से निमन्त्रण मिला । जाने माने हक़ीम परशुराम नागर घर आए । पिताजी से बोले, - मैं रामलीला में सीता की भूमिका के लिए कुंदन को चाहता हूँ पिताजी पसोपेश में । क्या कहें । बेटे ने तो मुश्किल में डाल दिया।दरबार में भजन गाने के लिए क्यों ले गया ? बोले ,- हक़ीम साब ! बच्चे की पढ़ाई का बहुत नुक़सान होगा । हक़ीम साब ने कहा ,'अमरचंद । बच्चे का हुनर क्यों मारते हो ? दरबार में आपने देखा ।महाराजा ने खुद पीठ थपथपाई थी । बेमन से पिताजी ने इजाज़त दे दी । राम की भूमिका खुद हक़ीम साब ही करते थे ।उन्होंने कुंदन को अभिनय और गायन शैली के अनेक गुर सिखाए ।आप उन्हें कुंदन का गुरु मान सकते हैं | सीता बना कुंदन अपने संवादों और गायन से लोगों को रुला देता । महिलाएँ रामलीला के बाद रोते हुए सीता बने कुंदन के पास जातीं और उनके पैर छूतीं । खुद कुंदन के पिता आगे कतार में बैठे आँसू बहा रहे होते ।

इन्ही दिनों पिताजी रिटायर हो गए । अपने शहर जालंधर जा बसे । कुंदन पढ़ाई के लिए जम्मू में चाचा के पास रह गया । उसने प्रिंस ऑफ वेल्स कॉलेज में दाख़िला लिया ।मन तो लगता नहीं था | एक सुबह कुंदन भी जम्मू छोड़कर जालंधर आ गए । ये उन्नीस सौ छब्बीस का साल था ।जालन्धर में पिताजी ने ठेकेदारी शुरू कर दी थी । वो चाहते थे - कुंदन मदद करे । ठेकेदारी कुंदन के बस की नहीं थीं । इसलिए कभी बिजली मैकेनिक बन जाते तो कभी किसी रेस्टॉरेंट में काम करने लगते ।अलबत्ता संगीत का शौक बदस्तूर जारी था । एक दिन तो पिताजी ने आसमान सर पर उठा लिया । बोले बहुत हो गया ! घर चुनो या संगीत । ज़िन्दगी भर बोझ उठाने का ठेका मैंने नहीं ले रखा है । दुखी कुंदन ने घर छोड़ने का फ़ैसला कर लिया । एक दिन चुपचाप भाग कर दिल्ली आ गए ।अज़नबी शहर में कुछ रिश्तेदार थे लेकिन उसने तय किया था कि वो अपनी दम पर रोज़ी रोटी कमाएगा । दोस्तों की मदद से दिल्ली के बिजली विभाग में इलेक्ट्रीशियन की नौकरी मिल गई । इस नौकरी में भला हुनर को कौन पूछता ? लिहाज़ा चन्द रोज़ बाद नौकरी छोड़ दी।इसके बाद मिलिटरी इंजीनियरिंग सर्विस में शिफ्ट अटेंडेंट की जॉब मिली ।यहाँ थोड़ा मन लगा ।वजह ये थी कि यहाँ अधिकांश कर्मचारी बंगाल के थे और संगीत पसन्द करते थे । कुंदन उनसे बंगला सीखते और उन्हें भजन सुनाते । सहगल के बॉस थे बंगला फिल्मों के लोकप्रिय गायक और अभिनेता पहाड़ी सान्याल के भाई । उन्होंने ही सहगल की मुलाक़ात पहाड़ी सान्याल से कराई । इस नौकरी को भी कुंदन ने कुछ दिन बाद लात मार दी क्योंकि

कुंदन ने वेतन में पाँच रूपए महीने बढ़ाने की माँग की थी और उसे खारिज कर दिया गया था । सहगल सड़क पर थे । ऐसे में उनके बड़े भाई रामलाल सहगल ने दिल्ली रेलवे स्टेशन पर टाइमकीपर की नौकरी दिला दी । कुछ दिन बाद भाई का तबादला मुरादाबाद हो गया।वो कुंदन को साथ ले गए । कुंदनलाल अब मुरादाबाद रेलवे स्टेशन पर क्लर्क थे । स्टेशन मास्टर अँगरेज़ थे । संगीत के शौक़ीन । मुरादाबाद के भद्रलोक में कुंदन की महफ़िलें सजने लगीं । स्टेशनमास्टर की पत्नी कुंदन से संगीत सीखतीं और अँगरेज़ी सिखातीं ।

ज़िंदगी में नाटक

कभी कभी कुंदन को लगता-दिल्ली में उनके हुनर की ज़्यादा क़द्र हो सकती है | मुरादाबाद छोड़ कर जा पहुंचे दिल्ली।रेलवे यार्ड में नौकरी करने लगे ।एक दिन गोरी हुकूमत में बड़े पद पर तैनात राय साहब राघवानंद गौतम ने बसन्तपंचमी पर अपने घर गाने का न्यौता भेजा । सहगल ने वो संगीत महफ़िल लूट ली । रायसाहब शिमला के रहने वाले थे और वहाँ ड्रामा क्लब चलाते थे । उन्होंने कुंदन से कहा,रेलवे की नौकरी छोड़ क्यों नहीं देते ? शिमला के ड्रामाक्लब में गाने का भरपूर अवसर होगा और ज़रूरत के हिसाब से पैसे मिल जाएँगे । अंधा क्या चाहे - दो आँखें । कुंदन जा पहुंचे शिमला। एमेच्योर ड्रामेटिक क्लब में कुंदन की नई नौकरी शुरू हो गई । क्लब के सारे शो गेटी थिएटर में होते थे । राय साहब ने एक कमरा कुंदन को दिला दिया और ढाबे में खाने का इंतज़ाम कर दिया । उन दिनों गेटी थिएटर में एक शाम का टिकट होता था डेढ़ सौ रूपए ।ये उन्नीस सौ तीस का साल था ।एक नाटक में कुंदन ने हिजड़े की भूमिका निभाई और गाना गाया - सैयाँ ! हाय ये बताशे की जोड़ी | इस नाटक ने कुंदन को शिमला का हीरो बना दिया । जैसे

ही नाटक ख़त्म हुआ ,एक दर्शक ग्रीन रूम में घुस गए और कुंदन को खींचकर अपनी गाड़ी में बिठा लिया और शिमला के मशहूर विलायत टेलर के पास ले गए । कुंदन के लिए थ्री पीस सूट का ऑर्डर दिया । साथ में हैट और टाई भी । तीसरे दिन कुंदनलाल ने जीवन में पहली बार थ्री पीस हैट टाई का आनंद उठाया । जब गेटी थिएटर में पहनकर दाख़िल हुए तो किसी ने पहचाना ही नहीं । थ्री पीस दिलाने वाले दीवाने दर्शक थे - राजस्थान की झालावाड़ रियासत के महाराजा ।सहगल की लोकप्रियता को देखते हुए क्लब ने एक नया नाटक - पत्नी प्रताप सती अनुसुइया के मंचन का फ़ैसला किया । कुंदन इसमें अनुसुइया की भूमिका में थे । इस नाटक ने बह बहुत लोकप्रियता दिलाई

रायसाहब राघवानंद गौतम तो खुश थे लेकिन कुन्दन दिन भर खाली रहते थे | उन्होंने राय साहब से कहा कि वो कोई पार्ट टाइम जॉब दिला दें |

राय साहब ने ड्रामा क्लब के संरक्षक आनंदी प्रसाद से बात की । आनंदी प्रसाद रेमिंगटन टाइपराइटर कंपनी में मैनेजर थे । इस तरह कुंदन लाल सहगल की नौकरी टाइपराइटर कंपनी में शुरू हो गई । दिन अच्छे कटने लगे ।इतने पैसे कि सिगरेट की लत लग गई । छह सात महीने बाद कंपनी ने दिल्ली तबादला कर दिया। ड्रामा क्लब को तगड़ा झटका लगा । कुंदनलाल सहगल अब शहर दर शहर घूम घूम कर टाइपराइटर बेच रहे थे । वो दफ़्तरों में जाते ।आवाज़ का जादू बिखेरते । लौटते तो ढेर सारे ऑर्डर उनकी जेब में होते ।टाइपराइटर की बिक्री कई गुना बढ़ गई ।दूसरे सेल्समेन कुंदन से जलने लगे । वो एक साज़िश के शिकार हो गए ।शिक़ायत हुई कि कुंदन ने टाइपराइटर बेचने से मिले पैसे जमा नहीं कराए । जाँच कराई गई । आरोप झूठे निकले । लेकिन कुंदन का दिल टूट गया । उन्होंने तय किया कि अब नौकरी नहीं करेंगे ।एक दिन सुबह कंपनी का दफ़्तर तो खुला लेकिन कुंदनलाल सहगल नदारद थे ।कंपनी ने कुंदन खो दिया था ।सहगल पैसों की गड़बड़ी के आरोप से आहत थे । ज़िन्दगी में इंसान पर ऐसा दौर भी आता है । दुनिया आरोपों के कटघरे में खड़ा करती है ।इससे इंसान या तो टूट जाता है , बिखर जाता है या अपनी बेक़सूरी हिमालय की चोटी पर चढ़ कर साबित करता है । सहगल ऐसा ही कुछ करना चाहते थे और जा पहुँचे नई दिल्ली स्टेशन । सामने लखनऊ जाने वाली ट्रेन खड़ी थी । थर्ड क्लास का टिकट ख़रीदा और डिब्बे में जा बैठे।ख़्यालों में डूबे कब कानपुर आ गया । पता ही नहीं चला।न जाने क्या सूझा कि झोला उठाया और उतर गए । नियति शायद उनकी और परीक्षा लेना चाहती थी |

साड़ी ले लो ! साड़ी

उन्हें याद आया,जब कानपुर में टाइपराइटर बेचने आते थे तो कुछ दफ़्तरों के आला अफ़सर उनको बड़ी इज़्ज़त देते थे ।गायन भी पसंद करते थे । शायद मदद करें । मगर उनके पास गए तो सभी ने हाथ खड़े कर दिए । किसी किसी ने तो पहचाना तक नहीं । टूटे सहगल बिखरने लगे । जेब के पैसों ने चेतावनी दे दी । कुछ दिन गुज़रे । पेट भरने के लिए भी पैसे न बचे । कई दिन भूखे रहना पड़ा । एक दिन किसी चमड़ा फैक्टरी के दरवाज़े बेहोश होकर गिर पड़े । मज़दूर उठाकर बस्ती में ले गए । दो चार दिन रखा । तबियत सुधर गई तो जाने दिया।कुंदन अब गुमसुम रहने लगे थे | कभी जी उचटता तो गंगा किनारे सरसैया घाट पर मन्दिर के सामने बैठकर भजन गाने लगते । एक दिन तो भजन गाते इतने डूब गए कि

आँसू बहने लगे । सुध बुध खो बैठे ।लोगों ने समझा-भिखारी है। वे पैसे फैंक कर आगे बढ़ जाते । सहगल को होश आया तो देखा-पैसे बिखरे पड़े हैं।अपने पर शर्म आने लगी । देखा एक सज्जन घूर कर देख रहे थे ।परिचय हुआ तो उन्होंने सहगल को जॉब ऑफर कर दिया । वो एक साड़ी विक्रेता थे । बोले,गा गाकर साड़ी बेचो । जितनी साड़ी उतना कमीशन । मरता क्या न करता । सोचा ज़िंदा रहूँगा तो संगीत साधना चलेगी।मर गया तो सारा संगीत धरा रह जाएगा ।अगले दिन से सहगल साड़ीवाला बन गए । पहले दिन ही आठ साड़ी बेचीं। कानपुर की तंग गलियों में साड़ियों का ब्यौरा गाते हुए देते ।पीछे पीछे साड़ी विक्रेता का नौकर साड़ियों का गठ्ठर लादे घूमता । धंधा चल निकला । दिन भर साड़ियाँ बेचते और शाम को कानपुर के संगीत उस्तादों की संगत में चले जाते। कानपुर में उन दिनों मुजरे भी होते थे । कुछ तवायफ़ें ठुमरी ,दादरा और लोकगीतों के लिए मशहूर थीं ।एक तवायफ़ को सहगल गुरु माँ मानने लगे और उनसे ठुमरी,दादरा सीखा । कानपुर में भी कुंदन की गायिकी के चर्चे हो गए । नियति कुंदन को सुर सम्राट बनाने से पहले अपने ढंग से ट्रेनिंग दे रही थी ।एक दिन तो कमाल हो गया । एक संगीत महफ़िल में उन्हें पंडित हरिशचंद्र बाली मिले । वो जालन्धर से आए थे और कुंदन के परिवार के मित्र थे । जब कुंदन जम्मू छोड़कर जालन्धर आए थे तो वहां के संगीत संसार से परिचय बालीजी ने ही कराया था । बाली जी बोले ,

अरे ! कुंदन तुम यहाँ क्या कर रहे हो ?
जी ।चार पाँच महीने से कानपुर में हूँ ।
तुम्हारे घर वाले तुम्हें ढूँढ रहे हैं ।
मगर मैं तो बराबर माँ को पत्र भेज रहा हूँ ।

मज़ाक़ बन्द करो कुंदन । कानपुर में हो और चिठ्ठी कभी इलाहाबाद से ,कभी लखनऊ से तो कभी मुरादाबाद से भेजते हो और किसी में पता भी नहीं लिखते ।
मैं क्या लिखता ? पिताजी मुझे पसन्द नहीं करते । उन्होंने तो मुझे निकाल ही दिया था ।

तुम कलकत्ता क्यों नहीं जाते । वहां न्यू थिएटर वाले अब बोलती फ़िल्में बनाना शुरू कर रहे हैं । उनमें एक्टिंग और गाना -दोनों करना पड़ता है । तुमने तो रामलीला में एक्टिंग भी की है ।

लेकिन वहां मुझे कौन जानता है ?
अच्छा सुनो । न्यू थिएटर के संगीत निर्देशक राय चंद्र बोराल मेरे मित्र हैं । मैं तुम्हें उनसे मिला दूंगा ।

बालीजी ने कुंदन के सपनों को पंख लगा दिए थे । कानपुर छोड़ने से पहले उन्होंने साड़ी वाले सेठजी को इरादा बताया ।सेठजी उनके लिए ईश्वर से कम नहीं थे । सेठजी खुश हुए । बोले

कलकत्ता ज़रूर जाओ ।कोशिश से ही क़ामयाबी मिलेगी । लेकिन इतने बड़े शहर में कोई ठिकाना है ? कहाँ जाओगे ? कहाँ रुकोगे ? खर्च कैसे चलेगा ? काम मिलने में तो देर लगेगी । हमारी एक गद्दी कलकत्ता में है । मैं अपने मैनेजर को चिठ्ठी लिख देता हूँ । जब तक काम न मिले तो तुम वहाँ रह सकते हो । खाने पीने की व्यवस्था भी हो जाएगी । सहगल असमंजस में । क्या करूँ ? इतना बड़ा एहसान।

एक पिताजी थे ,जो मेरा ख़र्च नहीं उठाना चाहते और एक यह सेठ । सेठजी ताड़ गए । बोले - तुम कलकत्ता में भी फेरी लगाकर साड़ियाँ बेच सकते हो । जब मर्ज़ी का काम मिल जाए तो छोड़ देना ।सहगल फूट फूट कर रो पड़े । वो सोच रहे थे - भगवान को किसी ने नहीं देखा । लेकिन जो मेरे सामने बैठा है वो क्या भगवान का रूप नहीं है ।

कलकत्ते में कुंदन

अगले दिन कुंदन कलकत्ता रवाना हो गए । कलकत्ता की तंग गलियों में सहगल के सुर साड़ी बेच रहे थे । दिन भर में ठीक ठाक पैसे कमा लेते । साड़ी बेचने से फ़ुर्सत मिलती तो शाम को न्यू थिएटर और रेडियो स्टेशन के चक्कर लगाते ।एक दिन रेडियो में मौक़ा मिल गया ।उन दिनों कलकत्ता रेडियो स्टेशन निजी हाथों में था | इसे इन्डियन ब्रॉडकास्टिंग कंपनी चलाती थी । जाने माने संगीत निर्देशक और गायक पंकज मलिक इसमें काम करते थे ।उसी रात रेडियोस्टेशन से कुंदनलाल सहगल की दो ग़ज़लें प्रसारित हो गईं । जिसने भी ये ग़ज़लें सुनीं , वो उनका दीवाना हो गया।लेकिन दिल्ली अभी दूर थी । न्यू थिएटर के द्वार अभी भी बन्द थे । सहगल फेरी लगाकर साड़ी बेचने का काम करते रहे । एक दिन एक ग़रीब बस्ती में नजमा नाम की लड़की मिली । उसने हरे रंग की साड़ी पसन्द की| दाम पूछे तो घबरा गई । साड़ी दस रूपए की थी । सहगल ने कहा,

पैसों की चिंता मत करो । नज़मा ने कहा - मैं इतनी महँगी साड़ी नहीं ले सकती । कोई बात नहीं । पैसे बाद में ले लूँगा ।

बिलकुल नहीं ।आपको नहीं पता । मेरे माँ बाप नहीं हैं । एक भाई है । मजदूरी करता है । किसी तरह गुज़ारा हो जाता है । अगर अगले शुक्रवार तक आप यह साड़ी न बेचें तो भाई अगले हफ्ते मजदूरी से यह साड़ी खरीद लेगा । ठीक है नजमा।अगले हफ्ते

तक साड़ी नहीं बेचूंगा ।उसके बाद साड़ी तुम्हारी ।

अगला शुक्रवार आया ।सहगल साड़ी लेकर नजमा के दरवाज़े पहंचे ।अंदर से किसी के रोने की आवाज़ आ रही थी । देखा नज़मा का भाई था । उसने बताया कि रात को नजमा के सीने में तेज़ दर्द हुआ । सुबह नजमा ने दम तोड़ दिया । दवाई और डॉक्टर की फीस में सारे पैसे ख़र्चे हो गए।अब क़फ़न के लिए भी पैसे नहीं हैं ।सहगल ने वो हरी साड़ी नजमा पर ओढा दी । बोले - बहन ! मैं तेरा गुनाहगार हूँ । जीते जी तेरी इच्छा पूरी न कर सका । तू खुदा से कहना ,तेरे इस अभागे भाई को माफ़ कर दे और फूट फूट कर रो पड़े । अगले दिन से साड़ी बेचना बंद कर दिया । आत्मा कचोट रही थी । सहगल साड़ीवाला मर चुका था | लेकिन नियति ने जैसे पटकथा पहले ही लिख रखी थी । जिसके लिए कलकत्ता आए थे ,वो वरदान की शक्ल में सहगल की झोली में आ गिरा । न्यू थिएटर से रिश्ता बन गया । सहगल को न्यू थिएटर से जोड़ने वाली अनेक कहानियाँ प्रचलित हैं ।शोध के मुताबिक़ सबसे ठीक ठाक और भरोसा करने लायक बात यह है कि इधर सहगल ने साड़ी बेचना बन्द किया , उधर जालन्धर से हरिश्चन्द्र बाली की चिठ्ठी मिली ।लिखा था कि कलकत्ता आ रहे हैं और न्यू थिएटर्स के संगीत निर्देशक रायचंद्र बोराल के घर कुंदन चाहें तो मिल सकते हैं । अंधा क्या चाहे दो आँखें । सुबह सुबह जा पहुँचे बोराल के घर । बालीजी ने बोराल से मिलाया । आर सी बोराल कुंदनलाल को ले गए बीएन सरकार के पास । सरकार ने देखा तो बोले ,

अरे इस लड़के से तो मैं कई बार मिल चुका हूँ । इसे तो बंगला भाषा ही नहीं आती । कैसे काम करेगा न्यू थिएटर में ?

एक बार इसका काम तो देख लीजिए । आपको निराशा नहीं होगी । आर सी बोराल ने कहा ।

चलो तुम कहते हो तो देखते हैं । शर्त ये है कि इन्हें तुरन्त बंगला सीखनी पड़ेगी ।

ठीक है ।मैं आपको किसी भी बंगला बोलने वाले से अच्छी बंगला सीख कर बताऊंगा । कुंदनलाल ने चहकते हुए कहा ।

पहले कहीं काम किया है ?
जी ! टाइपराइटर कंपनी में काम करता था ।

कितना पैसा मिलता था ?
जी डेढ़ सौ रूपए और भत्ता ।

ठीक है । हम आपको दो सौ रूपए से ज़्यादा नहीं दे सकते । दो सौ रूपए हर महीने और पाँच रूपए रोज़ भत्ता ।

कुंदनलाल सहगल आसमान में उड़ रहे थे । दो सौ रूपए और अपनी पसन्द का काम ।

ये वो दौर था ,जब गूँगी फ़िल्मों की विदाई हो रही थी और बोलती फ़िल्में परदे पर आने की तैयारी कर रहीं थीं । न्यू थिएटर ने कुन्दनलाल सहगल को लेकर हिंदुस्तानी ज़ुबान में फ़िल्म मोहब्बत के आँसू बनाने का फ़ैसला किया । सोलह जनवरी उन्नीस सौ बत्तीस को फ़िल्म का पहला शो इलाहाबाद के विश्वंभर सिनेमा में हुआ । फिल्म पिट गई । सहगल दुःखी । अगली फिल्म इसी साल आई - ज़िंदा लाश । ये कॉमेडी फ़िल्म थी । ये भी फ़्लॉप हो गई । सहगल निराश ।न्यू थिएटर ने इसी साल तीसरी फ़िल्म बनाई - सुबह का सितारा । अफ़सोस ! ये भी नहीं चली । फ़्लॉप फ़िल्मों की हैट्रिक । वो अंदर ही अंदर टूटने लगे । लेकिन क्या ग़ज़ब का भरोसा था बीएन सरकार का अपने आप पर । उन्होंने हिम्मत नहीं हारी और चौथी फ़िल्म पूरन भगत बनाई । इस बार क़िस्मत मेहरबान थी । सहगल की लॉटरी लग गई । हालांकि वो हीरो नहीं थे । साधू के वेश में चार भजन गाए थे ।इस फ़िल्म ने बेशुमार लोकप्रियता बटोरी । बीएन सरकार सहगल से खुश थे । उन्हें लगा सहगल और भजन का रिश्ता परदे पर क़ामयाबी का फ़ॉर्मूला है । ताबड़तोड़ एक फ़िल्म राजरानी मीरा बना डाली । इस फ़िल्म ने भी ठीक ठाक कारोबार किया । इसमें उन्नीस गाने थे ।इसी साल याने उन्नीस सौ तैंतीस में फिल्म आई - दुलारी बीवी । इसमें वो हास्य अभिनेता थे । यह भी अच्छी चली ।

www.hindisongstt.com

सहगल अब बी एन सरकार के चहेते थे । वो सहगल को धार्मिक छबि से निकालना चाहते थे । अगली फिल्म में उन्होंने सहगल को प्रिंस मारकस बना दिया ।फिल्म थी यहूदी की लड़की । दरअसल ये फ़िल्म जर्मन तानाशाह हिटलर के यहूदियों पर अत्याचारों पर बनाई गई थी ।पारसी थिएटर के जाने माने नाटककार आग़ा हश्र कश्मीरी के नाटक पर ये फ़िल्म बनी थी । सहगल की नायिका थीं रतनबाई । उन्नीस में से पाँच गाने सहगल ने और दो रतनबाई ने गाए थे।उन्नीस जनवरी उन्नीस सौ चौंतीस को ये फ़िल्म कलकत्ता के न्यू सिनेमा में रिलीज़ हुई थी । इसी बीच न्यू थिएटर की फिल्म चंडीदास ने बहुत लोकप्रियता बटोरी थी ।ये बंगाल की पहली बोलती फ़िल्म थी । न्यू थिएटर के मैनेजमेंट ने मध्यकाल के कवि चंडीदास पर बनी इस फिल्म का हिंदी संस्करण बनाने का फ़ैसला किया । सहगल ने इसमें चंडीदास की भूमिका निभाई ।नायिका थीं गायिका -अभिनेत्री उमाशशि । इस फिल्म सेसहगल लोकप्रियता की चोटी पर जा बैठे। एक के बाद एक फ़िल्में आने लगीं । उन्नीस सौ चौंतीस में आई रूपलेखा मोहब्बत की कसौटी । इसमें सहगल सम्राट अशोक की भूमिका में थे । अगले साल तीन फ़िल्में आईं -डाकू मंसूर । इस पर गोरी हुकूमत ने बंदिश लगा दी । इसके अलावा क़ारवाने हयात और देवदास । भारतीय फिल्मों के इतिहास में मील का पत्थर । जाने माने बांग्ला कथाकार शरतचंद्र चट्टोपाध्याय की नाक़ाम मोहब्बत की कहानी । ये फ़िल्म पहले बांगला में बन चुकी थी । जिन बीएन सरकार ने बांगला नहीं जानने के कारण सहगल को नौकरी देने से साफ़ इंकार कर दिया था उन्होंने ही फ़िल्म के दो बांग्ला गीत सहगल से गवाए । देवदास का हिंदी संस्करण बना तो सहगल फिल्म के हीरो थे और उन्होंने सारे गाने गाए । फिल्म निर्देशक थे प्रमथेशचंद्र बरुआ । जब इस फ़िल्म का गीत दुःख के दिन बीतत नाहीं परदे पर आता था तो सिनेमा हॉल में मौजूद लोग फूट फूट कर रोते थे । कहा जाता है कि फ़िल्म के पहले शो में बरुआ रिवॉल्वर लेकर गए थे कि दर्शकों को फ़िल्म पसंद न आई तो वो खुद को गोली मार लेंगे ।

देवदास ने सहगल को महानायक बना दिया था | ये उन्नीस सौ पैंतीस का साल था | सहगल ने देवदास के क़िरदार को अमर कर दिया था | इसके बाद ज़िंदगी ने नई करवट ली | उन्होंने आशारानी को जीवनसंगिनी बना लिया | देवदास के बाद उन्होंने न्यू थिएटर्स की नौ फ़िल्मों में काम किया | नौ हिंदी और छह बांगला |

पूरब से पश्चिम

इसके बाद सहगल मुंबई पहुंचे | सहगल न्यू थिएटर के सबसे बड़े ब्रांड थे | एक के बाद एक नई धड़ाधड़ फ़िल्में मिलीं | उन्नीस सौ छत्तीस में करोड़पति और पुजारिन ,उन्नीस सौ सैंतीस में प्रेजिडेंट | प्रेजिडेंट के गाने इक राजे का बेटा लेकर उड़ने वाला घोड़ा और इक बंगला बने न्यारा तो आज भी लोग पसंद करते हैं | अगले साल आई फिल्म धरतीमाता | फ़िल्म सहकारी खेती और किसानों की समस्याओं पर आधारित थी | इन मुद्दों को पहले प्रगतिशील लेखक संघ के सम्मेलन में मुंशी प्रेमचंद भी उठा चुके थे | फिल्म में इसका असर साफ़ तौर पर दिखाई देता था | संगीतकार थे पंकज मलिक | इसका कोरस - दुनिया रंग रंगीली बाबा आज भी झूमने पर मजबूर कर देता है | धरतीमाता का जादू उतरा भी न था कि सहगल का एक और तिलिस्मी शाहकार सामने आया | फिल्म स्ट्रीट सिंगर के परदे पर सहगल ने ऐसा गीत गाया,जिसे गाए बिना कोई भी हिन्दुस्तानी आज गायक नहीं माना जाता | ये गीत है - बाबुल मोरा नैहर छूटो हि जाए | उन्नीस सौ उनतालीस में एक नई फिल्म आई -दुश्मन | उन दिनों हिन्दुस्तान में टीबी की बीमारी बड़ी भयानक मानी जाती थी | हर साल लाखों लोग मरते थे | ये फ़िल्म टीबी के ख़िलाफ़ जागरूक बनाने पर ज़ोर देती थी | वाइसरॉय की पत्नी के ख़ास अनुरोध पर ये फ़िल्म बनाई गई थी | सहगल का ये गीत निराशा के अँधेरे में जोत जगाने का काम करता है | गीत है - करूँ क्या आस निरास भई | दुश्मन के बाद अगले साल याने 1940 में आई ज़िंदगी | इस फ़िल्म ने भी ख़ूब लोकप्रियता बटोरी | इसे सहगल के फ़िल्मी करियर की शानदार फ़िल्म माना जाता है |भारतीय सिनेमा को पहली लोरी -सो जा राजकुमारी इसी फिल्म से मिली|

उन्नीस सौ बयालीस में सहगल की एक अनोखी भूमिका वाली फ़िल्म आई - लगन | वो एक कवि और गायक के क़िरदार में नज़र आए लेकिन अपनी ही हीरोइन के ख़िलाफ़ एक नकारात्मक चरित्र के साथ | गीत - लगन का गीत - पा लिया ! आजा मेरे पास

न्यू थिएटर ने कामयाब फ़िल्में हिंदी और बांगला भाषाओं में बनाने की परंपरा शुरू की थी | इसके दो फ़ायदे थे | कम लागत में दो फ़िल्में बन जाती थीं और दोनों फ़िल्में अलग अलग मुनाफ़ा कमाती थीं | इस कड़ी में लगन का बांगला संस्करण

परिचय के नाम से , दुश्मन जीबोन मरण के नाम से ,स्ट्रीटसिंगर साथी के नाम से ,प्रेजिडेंट -दीदी के नाम से,धूप छाँव भाग्यचक्र के नाम से और धरती माता देशेर माटी के नाम से बनी थी | लेकिन दीदी सहगल की पहली बांगला फ़िल्म थी,जिसमें वो हीरो थे और बांगला में गाने भी गाये थे | इसके बाद तो सहगल समूचे बंगाल में भी घर घर में लोकप्रिय हो गए | सहगल का बांगला पर अधिकार ऐसा था कि खुद गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर ने उन्हें अपने गीत गाने की इजाज़त दी थी | गुरुदेव के चाहने वालों के लिए यह चमत्कार से कम नहीं था क्योंकि गुरुदेव अपने गीतों की गायन शैली और संगीत के मामले में कभी समझौता नहीं करते थे | न्यू थिएटर में उनके पाँव जम चुके थे,लेकिन न्यू थिएटर के पाँव हालात ने उखाड़ दिए थे | उन्नीस सौ चालीस में कंपनी के स्टूडियो में भीषण आग लगी | सब कुछ स्वाहा हो गया | इन्ही दिनों दूसरे विश्वयुद्ध की आग से हिन्दुस्तान भी झुलसने लगा | कलकत्ता के आसमान पर लड़ाकू विमानों के शोर से दहशत का माहौल था |गोरी हुकूमत ने बंगाल को जंग में झोंक दिया था इसलिए अकाल के हालात बन गए |शाम होते ही लोग घरों में दुबक जाते थे|सिनेमाघर सुनसान रहते थे | न्यू थिएटर की हालत ख़स्ता हो गई | पूरब के उलट पश्चिम याने बंबई में हालत अपेक्षाकृत बेहतर थी |लिहाज़ा वहाँ की फ़िल्म इंडस्ट्री कलकत्ता के कलाकारों और टेक्नीशियनों को मुँह माँगी क़ीमत दे रही थी | पृथ्वी राज कपूर ,केएन सिंह, खेमचंद प्रकाश और केदार शर्मा जैसे लोग न्यू थिएटर से विदाई लेकर बंबई जा बसे थे | कुंदनलाल सहगल अपने आप से लड़ रहे थे | जिस न्यू थिएटर ने फुटपाथ से उठाकर बुलंदियों पर पहुँचाया ,उसे मुश्किल में कैसे छोड़ें ? लेकिन न्यू थिएटर के मालिक बी एन सरकार ने बड़प्पन दिखाया और उन्हें एग्रीमेंट से मुक्त कर दिया | एक दिन सहगल से कहा - एक साल के लिए तुम एग्रीमेंट से आज़ाद हो | साल भर बाद तुम्हारे लिए दरवाज़े हमेशा खुले रहेंगे और कुंदनलाल चल पड़े | एक बार फिर पूरब से पश्चिम की ओर |

शिखर पर सहगल

बंबई के रणजीत मूवीटोन के मालिक चंदू लाल शाह देवदास में सहगल का अभिनय और गायन देख चुके थे | उन्होंने सहगल को एक लाख रूपए साल का प्रस्ताव भेजा याने क़रीब दस हज़ार रूपए महीने | न्यू थिएटर्स से तो ये रक़म कई गुना ज़्यादा थी | सहगल बंबई पहुँचे शान से | रणजीत मूवीटोन की फिल्म सूरदास उनका इंतज़ार कर रही थी | सहगल का इतिहास जानने के बाद चंदूलाल शाह धार्मिक फिल्म से ही उनकी शुरुआत चाह रहे थे | न्यू थिएटर की लगातार तीन फिल्मों के फ्लॉप होने की कहानी उन्हें पता थी | उन्नीस सौ बयालीस में आई फिल्म सूरदास में पंद्रह गाने थे | इनमें तीन सूरदास के पद थे | तीनों सहगल ने गाए | हालाँकि एक पद में कुंदन लाल सहगल के साथ उनके छोटे भाई महिंदर ने भी स्वर दिया था | ये पद

था - निस दिन बरसत नैन हमारे | आगे बढ़ने से पहले एक बात स्पष्ट करना ज़रूरी है | कलकत्ता में ही सहगल को कमर और पैरों में दर्द शुरू हो गया था | ऐसे में किसी ने सलाह दी कि शराब से दर्द कम हो सकता है | सहगल ने पाया कि नशे में दर्द थोड़ा कम होता है | इसके बाद तो सिलसिला शुरू हो गया | लेकिन वो कभी हद से ज़्यादा नहीं गए | डाह रखने वालों ने सहगल और शराब के रिश्ते को लेकर कहानियाँ फैलानी शुरू कर दीं | झूठे प्रचार ने उनकी छबि को काफी नुकसान पहुँचाया | सूरदास के बाद अगले ही साल सहगल ने अपना सबसे बड़ा शाहकार परदे को भेंट किया | संगीत सम्राट तन्नूलाल दीक्षित उर्फ़ तानसेन के जीवन पर बनी इस फ़िल्म में सहगल तानसेन की भूमिका में थे | सहगल ने कभी बाक़ायदा शास्त्रीय संगीत नहीं सीखा था ,मगर फिल्म के परदे पर दीपक राग गाकर उन्होंने तानसेन को अमर कर दिया | देवदास के बाद तानसेन ही एक ऐसा चरित्र है जो नाम लेते ही सहगल के चेहरे से जुड़ जाता है ठीक वैसे ही जैसे मुग़ल ए आज़म में पृथ्वीराजकपूर और अकबर का किरदार | इन चरित्रों पर कितनी ही फ़िल्में बन जाएँ ,नाम तो सहगल और पृथ्वीराज कपूर के ही आते हैं |

तानसेन पूरी हुई तो मूवीटोन के मालिक चंदूलाल शाह सहगल को लेकर अगली फिल्म बनाने की सोचने लगे ,लेकिन तब सहगल के अनुबंध के सिर्फ नौ दिन बचे थे | उन्होंने केदार शर्मा से पूछा कि क्या कोई ऐसी कहानी है ,जिसमें सहगल के किरदार की शूटिंग केवल नौ दिन में पूरी हो सकती हो | केदार शर्मा ने कहानी भँवरा पेश की | ताबड़तोड़ शूटिंग शुरू हो गई और सहगल को नौ दिन बाद अनुबंध से मुक्त कर दिया गया | आपको याद होगा कि न्यू थिएटर के बीएन सरकार ने सिर्फ़ एक साल के लिए सहगल को अपनी कंपनी के एग्रीमेंट से मुक्त किया था | भँवरा में भी खेमचंद प्रकाश का संगीत था और निर्देशक थे केदार शर्मा

फ़िल्म तो बहुत नहीं चली - हाँ संगीत और सहगल बाज़ार में छाए रहे | भँवरा ख़त्म होते ही सहगल ने ट्रेन पकड़ी और ईमानदार प्रोफेशनल की तरह न्यू थिएटर में अपनी हाज़िरी लगा दी | बीएन सरकार खुश थे | हालांकि कंपनी की हालत अभी भी ख़स्ता थी | न्यू थिएटर ने सहगल को लेकर फिल्म मेरी बहन बनाई | इसमें गीत लिखे थे पंडित भूषण ने और संगीतकार थे पंकज मलिक | सात गानों वाली ये फ़िल्म भी खूब चली | सहगल की एक ग़ज़ल और दो गीतों के तो आज भी लोग दीवाने हैं | ये हैं -ऐ क़ातिबे तक़दीर मुझे इतना बता दे और दो नैना

मतवारे ,हम पर ज़ुल्म करें / हमसे छुपो न ओ प्यारी सजनियाँ | न्यू थिएटर की माली हालत ख़स्ता थी | ऐसे में सहगल को अनुबंध से बाँध कर रखना संभव नहीं था | ये बात अलग थी कि न सहगल कलकत्ता और न्यू थिएटर छोड़ना चाहते थे न सरकार ही ऐसा चाहते थे | इसी को नियति कहते हैं | आप नहीं चाहते लेकिन नियति आपकी ज़िंदगी की पटकथा पहले ही लिख चुकी होती है | भारी मन से बंबई के लिए ट्रेन में सवार हो गए | ये उन्नीस सौ पैंतालीस का साल था |

असाधारण लोगों के साथ ज़िंदगी में ऐसा दौर भी आता है ,जब देश और समाज उनकी प्रतिभा के स्तर पर नहीं होता और वो कुंठा के शिकार हो जाते हैं | सहगल शिखर पर थे ,लेकिन उनका सूनापन कोई नहीं समझ रहा था | वो वक़्त से आगे चल रहे थे | उन्होंने तय किया - अब कंपनी के अनुबंध से नहीं बंधेंगे | वैसे भी इतने महँगे सुपरस्टार को कोई कंपनी एग्रीमेंट में बाँध भी नहीं सकती थी | अभिनय और गायन के बिना वो ज़िंदा नहीं रह सकते थे और कंपनियाँ उनकी क़ीमत अदा नहीं कर सकती थीं | यही था शिखर का सूनापन | इस बार सहगल सुर सम्राट की तरह बंबई लौटे थे लेकिन दिल कलकत्ता के न्यू थिएटर में ही छूट गया था | जहाँ दिल रहना चाहता था ,वहाँ अवसर नहीं थे |जहाँ अवसर थे ,वहाँ पैसे नहीं थे | सहगल सोचते -शिखर पर होना कितना तक़लीफ़ देह है | निर्माता सोचते कि जितनी सहगल की फ़ीस है ,उतने में तो आधी फ़िल्म बन जाएगी | इस कारण बहुत दिन किसी फ़िल्म का ऑफर नहीं आया | आर्थिक संकट बढ़ने लगा | तनाव के कारण शरीर में बीमारियों ने अड्डा जमा लिया | रोज़ शाम पीने की तलब होने लगी | ऐसे में कलकत्ता के किसी दोस्त से दिल की बात की | दोस्त ने कोशिश की और कलकत्ता के यूनिटी प्रोडक्शन ने कुरुक्षेत्र फ़िल्म बनाई | सहगल को फीस से आधे से भी कम पैसे में काम करना पड़ा | इसमें उन्होंने चार गीत भी गाए | फ़िल्म नहीं चली | कुरुक्षेत्र के बाद जयंत देसाई प्रोडक्शन ने फ़िल्म तदबीर में सहगल को लिया |इसमें भी सहगल को आधे से कम पैसे मिले | यह भी नहीं चली |

आख़िरी सफ़र पर

सहगल फिर अवसाद में थे | फ़िल्म इंडस्ट्री में यह संदेश जा रहा था कि सहगल साब की फ़िल्में पिट रहीं हैं | सहगल किसे मन की बात बताते ? मजबूरी में फ़िल्में साइन की थीं | फ्लॉप होना तो तय था | तदबीर के गाने भी नहीं चले | इसके बाद 1946 में आई उमर ख़ैयाम | अफ़सोस ! यह भी नहीं चली | फ्लॉप फिल्मों की एक बार फिर हैट्रिक | सहगल थकने लगे | तबियत बिगड़ने लगी | सहगल को लगा कि अब पारी का अंत निकट है | डिप्रेशन में वो अक्सर जालंधर जाने की सोचने लगते | एक दिन तो फ़ैसला भी कर लिया कि बंबई छोड़ देंगे | ट्रेन का टिकट लेते इसी बीच कारदार प्रोडक्शन की फ़िल्म शाहजहाँ का ऑफर आया | संगीत निर्देशक नौशाद थे |शाहजहाँ में सहगल ने दुखी शायर का क़िरदार अदा किया था | इस फ़िल्म के गीतों ने एक बार फिर सहगल को सुर सम्राट का ताज पहना दिया | सहगल खुश थे ,लेकिन फ़िल्म देवदास या तानसेन के आगे कहीं नहीं ठहरती थी | फ़िल्म के गीत - ग़म दिए मुस्तक़िल कितना नाज़ुक है दिल और जब दिल ही टूट गया तो आज भी अच्छे लगते हैं | शाहजहाँ के बाद उन्हें जीत प्रोडक्शन की फ़िल्म परवाना का निमंत्रण मिला | फिल्म को उन्होंने उकताहट में पूरा किया | परवाना पूरी होते होते मुंबई से सहगल का मन भर गया | सेहत

बिगड़ने लगी | डॉक्टरों ने आबो हवा बदलने की सलाह दी | सहगल ट्रेन में जालंधर लिए रवाना हो गए | वो 26 दिसंबर 1946 की तारीख़ थी| जालंधर में घर परिवार के बीच सहगल खुश थे | सेहत भी शुरुआत में सुधरती दिखाई दी,लेकिन चंद रोज़ बाद ऐसी बिगड़ी कि बिस्तर से उठ न पाए | दवाओं ने असर बंद कर दिया | नया साल आया | आज़ादी का साल | लेकिन आज़ादी का जश्न देखने के लिए सहगल नहीं थे | 18 जनवरी 1947 को कुंदनलाल सहगल हमेशा के लिए आख़िरी सफ़र पर चले गए | कुंदनलाल सहगल अपनी गायिकी साथ नहीं ले गए | आज भी हर पीढ़ी के गायन में सहगल का नया अवतार नज़र आता है | उनकी शैली और अंदाज़ की नक़ल हिन्दुस्तान के सारे बड़े गायक करते रहे हैं | लतामंगेशकर और मोहम्मद रफ़ी से लेकर आज तक नए गायक कर रहे हैं और न जाने कितने साल करते रहेंगे | हमारे दिलों में आज भाषा और प्रांत को लेकर पूर्वाग्रह हैं मगर एक दौर ऐसा भी था,जब कश्मीर से कन्याकुमारी तक सहगल ही सहगल थे | हिन्दुस्तान के बाहर भी उनकी आवाज़ का जादू आज तक बरक़रार है | अक्सर होता है कि जब कोई महान शख्सियत इस दुनिया से विदा लेती है तो कुछ दिन रोने धोने के बाद लोग भूल जाते हैं | लेकिन जैसे जैसे दिन बीतते हैं ,सहगल और शिद्दत से याद आते हैं | कुंदनलाल सहगल जैसे लोग बार बार जन्म नहीं लेते | वो एक बार आते हैं और गुलशन को हमेशा महकाते रहते हैं | खेद है कि सहगल का हुनर आने वाली नस्लों तक पहुँचाने के लिए गंभीरता से कोई काम नहीं किया गया | नई जनरेशन के जो लोग सहगल को याद करते हैं ,वो अपने प्रयासों से उनके बारे में जानते हैं | आज कितने विश्वविद्यालय हैं ,जिनमें सहगल पढ़ाए जाते हैं ,कितने शोध प्रबंध सहगल पर किए गए और कितने विश्वविद्यालय सहगल के नाम पर शुरू किए गए ? उत्तर बेहद निराशाजनक है |